जैन बाल पोथी

भाग 2

जैन बाल पोथी

भाग-2

लेखक :

ब्र. हरिलाल जैन

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

प्रकाशकीय
(ग्यारहवाँ संस्करण)

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा साहित्य प्रकाशन की शृँखला में जैन बालपोथी भाग-2 का ग्यारहवाँ संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं में धार्मिक संस्कार दृढ़ हों और वे जैनदर्शन का मर्म समझ सकें - इस हेतु से उनको लक्ष्य कर इस बालपोथी को तैयार किया गया है।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित 'श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड' के पाठ्यक्रम में भी जैन बालपोथी भाग-1 व 2 समाविष्ट है तथा प्रतिवर्ष हजारों छात्र इनकी परीक्षाओं में बैठते हैं। दोनों भाग निरन्तर उपलब्ध रहें इस दृष्टि से इन दोनों भागों का प्रकाशन अपने हाथ में लेना पड़ा है।

यह जैन बालपोथी मात्र बच्चों को ही नहीं अपितु प्रत्येक जिज्ञासुओं को भी उपयोगी है। पाठशालाओं में तो यह पढ़ाने योग्य है ही, बच्चे इसे बड़े चाव से पढ़ते हैं और इसमें प्रकाशित चित्रों के माध्यम से मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। स्व. ब्र. हरिभाई ने इसे बहुत ही श्रमपूर्वक तैयार की है, अब वे हमारे बीच नहीं हैं; परन्तु बालसाहित्य के लेखन में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान भुलाया नहीं जा सकता। आप सभी इससे लाभान्वित हों इसी भावना के साथ -

- ब्र. यशपाल जैन
प्रकाशनमंत्री
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

विषय सूची

वंदना

करूं नमन मैं अरिहन्तदेवको;
करूं नमन मैं सिद्धभगवंतको;
करूं नमन मैं आचार्य देवको;
करूं नमन मैं उपाध्यायदेवको;
करूं नमन मैं सर्व साधुको;
पंच परमेष्ठी प्रभु, मेरे तुम इष्ट हो।

मंगल-प्रार्थना

अरिहंत मेरा देव है,
सच्चा वो वीतराग है;
सारे जगको जाने है,
मुक्तिमार्ग दिखाते हैं.....अरिहंत.

जहां सम्यक् दर्शन-ज्ञान है,
चारित्र वीतराग है;
ऐसा मुक्ति-मार्ग है,
जो मेरे प्रभु दिखाते हैं.....अरिहंत.

अरिहन्त तो शुद्धात्मा है,
मैं भी उनही जैसा हूं;
अरिहन्त जैसा आत्मा जान
मुझे अरिहन्त होना है.....अरिहन्त.

[पाठ - १]

पंच परमेष्ठी
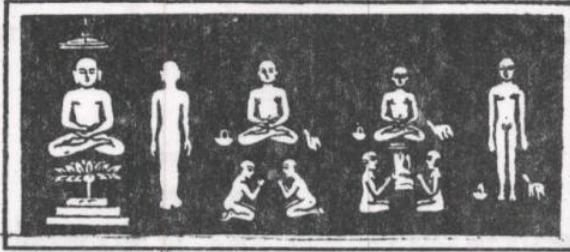
बच्चो! कहो, तुम्हें क्या होना प्रिय है ?

हमें राजा होना प्रिय नहीं है;

हमें इन्द्र होना प्रिय नहीं है;

हमें तो भगवान होना प्रिय है।

अरिहन्त होना प्रिय है ।1।

हमें सिद्ध होना प्रिय है ।2।

हमें आचार्य होना प्रिय है ।3।

हमें उपाध्याय होना प्रिय है ।4।

हमें साधु होना प्रिय है ।5।

- ये पांचों हमारे परमेष्ठी भगवान हैं।

वे वीतरागविज्ञानके द्वारा परमेष्ठी हुए हैं।

और उन्होंने हमें भी वीतराग-विज्ञानका उपदेश दिया है।

अपने को जो प्रिय है उनको प्रतिदिन याद करना चाहिए,
और प्रतिदिन उन्हें नमस्कार करना चाहिए।

पंच परमेष्ठी हमें बहुत प्रिय हैं; वे आत्माके परम शुद्ध स्वरूपमें स्थिर हुए हैं इसलिए परमेष्ठी हैं। हमें भी ऐसा ही बनना है; अतः उन्हें याद करके हम नमस्कार करते हैं-
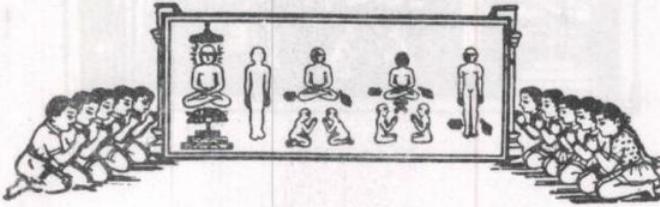
1. णमो अरिहंताणं ।
2. णमो सिद्धाणं।
3. णमो आइरियाणं।
4. णमो उवज्झायाणं।
5. णमो लोए सव्वसाहूणं।

इस सूत्र को पंच-नमस्कार-मंत्र कहते हैं।

भाईयो ! जिनमंदिर में दर्शन करते समय प्रतिदिन इस मंत्र को पढ़ना, और सुबह-शाम भी स्तुति के द्वारा पंच परमेष्ठी भगवानको याद करना-

करूं नमन मैं अरिहन्त देव को पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो ।1 ।
करूं नमन मैं सिद्धभगवन्त को पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो ।2 ।
करूं नमन मैं आचार्यदेव को पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो ।3 ।
करूं नमन मैं उपाध्यायदेव को पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो ।4 ।
करूं नमन मैं सर्व साधु को पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो ।5 ।

[पाठ 2]

चार मंगल
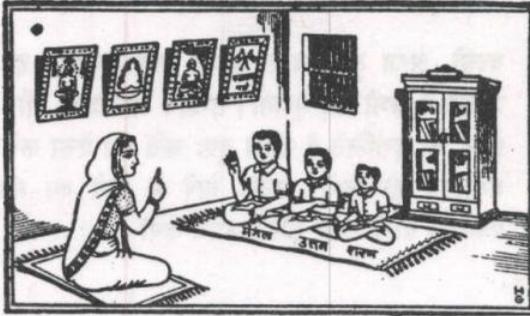
एक धर्ममाता के तीन पुत्र थे।

उनके नाम थे - मंगल कुमार, उत्तम कुमार, शरण कुमार।

एक बार इन तीनों से माताजी ने ये तीन प्रश्न पूछे-

(1) बोलो मंगलकुमार, इस जगत में कौनसी चार वस्तुएँ मंगल हैं ?

मंगल ने कहा - अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रय धर्म, ये चार मंगल हैं।

(2) माताजीने कहा-बहुत अच्छा; अब उत्तमकुमार, तुम बताओ कि कौनसी चार वस्तुएँ इस लोक में उत्तम हैं ?

उत्तमकुमार ने कहा - माँ, इस लोक में अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रय धर्म; ये चार उत्तम हैं।

(3) अब माताजी ने तीसरा प्रश्न शरणकुमार से पूछा-बेटा, इस संसार में जीव को कौनसी चार वस्तुएँ शरणरूप हैं ?

शरणकुमार ने ऊपर के चित्र देखकर कहा-मां! इस संसार में अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रयधर्म, ये चार हमें शरण हैं।

(माता :) बच्चो, आज तुमने बहुत अच्छी बात समझी। इन चारों को जीवन में कभी मत भूलना। उन्होंने आत्मज्ञान और वीतरागता प्रगट की इसलिये वे मंगल हुए; यदि हम ऐसा करें तो हम भी मंगलरूप हो जायें। उनके बारे में नीचे का मंत्र तुम सब एकसाथ बोलो और इसे कंठस्थ करो-

चत्तारि मंगलं-

1. अरिहन्ता मंगलं।
2. सिद्धा मंगल।
3. साहू मंगलं।
4. केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।।

चत्तारि लोगुत्तमा-

1. अरिहन्ता लोगुत्तमा।
2. सिद्धा लोगुत्तमा।
3. साहू लोगुत्तमा।
4. केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।।

चत्तरि सरणं पव्वज्जामि-

1. अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि।
2. सिद्धे सरणं पव्वज्जामि।
3. साहू सरणं पव्वज्जामि।
4. केवलिपण्णतं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।।

[पाठ 3]
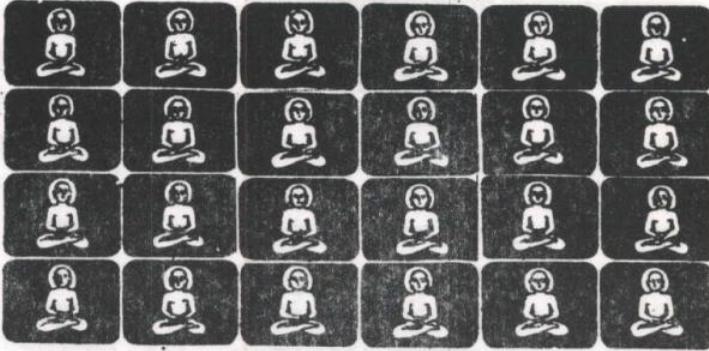
हमारे तीर्थंकर

वीतराग-सर्वज्ञ होकर जो धर्मतीर्थ का उपदेश देते हैं, वे हमारे तीर्थंकर हैं। अपनी इस भारतभूमि में असंख्य वर्षों के पूर्व भगवान ऋषभदेव हुए, उन्होंने धर्म का सच्चा स्वरूप समझाकर भवसमुद्र से तिरने का उपाय दिखाया, इसलिये वे हमारे प्रथम तीर्थंकर हुए। भरत चक्रवर्ती उनके पुत्र थे। भगवान का जन्म अयोध्या नगरी में हुआ था, अयोध्या हमारा महान तीर्थ है।

ऋषभदेव तीर्थंकर के बाद असंख्य वर्षों में 23 तीर्थंकर और हुए, जिनमें अन्तिम तीर्थंकर थे महावीर भगवान; वे हमारे 24 वें तीर्थंकर थे, उन्होंने राजगृही में विपुलाचल से जो धर्मतीर्थ का उपदेश दिया वह आज भी चल रहा है, एवं आगे हजारों वर्ष तक चलता रहेगा।

तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग बताया है। मोक्ष का मार्ग सभी तीर्थंकरों ने एक सा ही बताया है। अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित्र को प्रगट करना-यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते हैं। जैनधर्म का अर्थ है वीतरागधर्म। वह सबसे ऊंचा है।

भगवान के द्वारा बताया गया यह मार्ग हमें बड़े भाग्य से मिला है, इसलिये हमें आत्माको पहचानकर वीतरागभावकरना चाहिए।

अपने 24 तीर्थंकरों में से पहले ऋषभदेव व अन्तिम महावीर, इन दो तीर्थंकर के नाम तो तुमने जान लिये; अब बीच के 22 तीर्थंकरों के नाम जानने की भी तुम्हें इच्छा होगी, सो उन्हें भी पढ़ो, और इन 24 तीर्थंकरों के नाम कंठस्थ करो-

(1) ऋषभदेव (2) अजितनाथ (3) संभवनाथ (4) अभिनन्दन
(5) सुमतिनाथ (6) पद्मप्रभ (7) सुपार्श्वनाथ (8) चन्द्रप्रभ
(9) सुविधिनाथ (10) शीतलनाथ (11) श्रेयांसनाथ (12) वासुपूज्य
(13) विमलनाथ (14) अनन्तनाथ (15) धर्मनाथ (16) शान्तिनाथ
(17) कुंथुनाथ (18) अरनाथ (19) मल्लिनाथ (20) मुनिसुव्रत
(21) नमिनाथ (22) नेमिनाथ (23) पार्श्वनाथ (24) महावीर

भारत में बम्बई, जयपुर, चन्देरी, सम्मेदशिखर, श्रवणबेलगोल, मूडविद्रि आदि अनेक स्थानों पर हमारे इन चौवीसों तीर्थंकर की मूर्तियाँ विराजमान हैं, उन्हें देखकर आनन्द होता है। तुम कभी उनके दर्शन अवश्य करना।

हमारे सभी तीर्थंकरों का जीवन बहुत ऊंचा है। उनका जीवन वीतरागी जीवन है, और वीतरागी जीवन ही ऊंचा है। तुम बड़े होकर चौबीस तीर्थंकर का जीवनचरित्र अवश्य पढ़ना। उसे पढ़ने से तुममें धर्म की भावना जागृत होगी।

बन्धुओ ! आज ये तीर्थंकर तो हमारे समक्ष नहीं हैं, परन्तु उनके द्वारा दिखाया हुआ धर्मतीर्थ ज्ञानी-धर्मात्माओं के द्वारा आज भी हमें मिल रहा है। भगवान ने सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप मोक्षमार्ग बताया है, हम सबको उसकी उपासना करनी चाहिये। इस प्रकार भगवान के द्वारा कहे गये धर्म को समझकर उसकी उपासना करना यह हमारा कर्तव्य है। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

चौबीस तीर्थंकर भगवतों के चिन्ह इस प्रकार हैं-

1. बैल 2. हाथी 3. घोड़ा 4. बन्दर 5. चकवा 6. पद्म 7. स्वस्तिक 8. चंद्र 9. मगर 10. कल्पवृक्ष 11. गेंडा 12. भैंसा 13. शूकर 14. सेही 15. बज्र 16. हिरन 17. बकरा 18. मछली 19. कुंभ 20. कछुआ 21. कमल 22. शंख 23. सर्प 24. सिंह। [कंठस्थ करो]

बैल हाथी और अश्व है, बन्दर चकवा पद्म,
स्वस्तिक चन्द्र रु मगर है, कल्पवृक्ष गेंडा भैंस,
शूकर सेही बज्र है, हिरण बकरा मीन,
कलश कछवा कमल है, शंख सर्प अर सिंह।
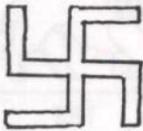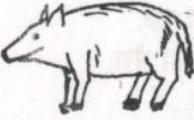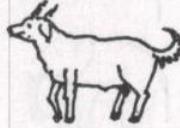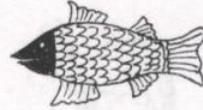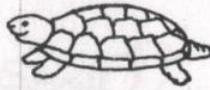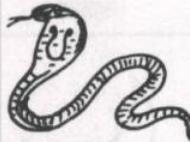
चौबीस लक्षण प्रभुजी के मंगलकारी जान, पर चैतन्य-चिन्ह आत्मका सच्चा वोही मान।
चेतन-लक्षण जान के कर आतम पहचान, आत्मस्वरूप को जानकर कर ले केवलज्ञान।।

[पाठ ४]

भगवान ऋषभदेव
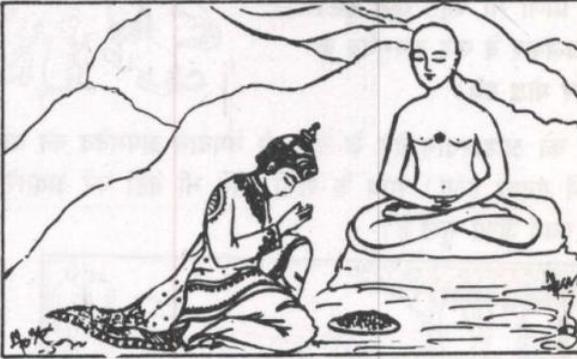
आप जानते ही हो कि अपने भरतक्षेत्र के 24 तीर्थंकरों में सबसे पहले भगवान ऋषभदेव हैं। वे असंख्य वर्ष के पहले अपनी इस भारत भूमिमें हुए; और उन्होंने ही सबसे पहले धर्म का उपदेश देकर भरतक्षेत्र में मोक्ष का दरवाजा खोल दिया।

सभी देशों में भारत देश का ही यह खास गौरव है कि सभी तीर्थंकर भगवंतों का जन्म भारतदेश में ही होता है। भगवान ऋषभदेव का भी जन्म अयोध्या नगरी में चैत्र वदी नवमीके दिन हुआ था, अतः अयोध्यानगरी हमारे देश का महान तीर्थ है।

भगवान ऋषभदेव पहले से भगवान नहीं थे, पहले तो वे भी हमारी तरह संसार में थे। उनको आत्मा का ज्ञान भी नहीं था। दस भव पहले वे महाबल नामक राजा थे, तबसे उनको धर्म का प्रेम जगा और आत्मस्वरूप समझने की जिज्ञासा हुई।

इसके बाद जब वे वज्रजंघ नामक राजा हुए तब उन्होंने अपनी श्रीमती रानी के साथ बड़ी भक्तिपूर्वक दो मुनिवरों को आहारदान दिया। यह प्रसंग देख कर नेवला, सिंह सुअर व बन्दर जैसे प्राणी भी बहुत खुश हुए। और आगे चलकर वे सब ऋषभदेव के ही पुत्र होकर मोक्ष गये।

मुनिओं को आहारदान देने के फल से भगवान ऋषभदेव का वह जीव भोग भूमि में मनुष्य हुआ। साथ के सभी जीव भी वहीं पर अवतरे। उस भोगभूमि में स्वर्ग जैसा सुख है।

एक बार प्रीतिकर नामक मुनिराज, जो कि आकाश में चलते थे, वे उस भोगभूमि में आये, और बहुत उपदेश देकर भगवान के जीव को आत्मस्वरूप समझाया। यह समझ करके भगवान के जीव ने उसी वक्त सम्यग्दर्शन प्रगट किया। सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति से वह बहुत ही आनन्दित हुआ, और उसने मुनिओं की बहुत भक्ति की। अन्य पाँचों जीवों ने भी आत्मस्वरूप समझकर सम्यग्दर्शन प्राप्त किया।

इसके बाद, अन्तिम तीसरे भव में भगवान का जीव विदेह क्षेत्र में वज्रनाभि चक्रवर्ती हुआ। उस वक्त उसके पिताजी भी तीर्थंकर थे। चक्रवर्ती

होते हुए भी भगवान जानते थे कि इस चक्रवर्ती राज में मेरा सुख नहीं है, सुख तो रत्नत्रय में है। अतः चक्रवर्ती का राज छोड़ के वे मुनि हो गए, और रत्नत्रय का उत्तम पालन करके सर्वार्थसिद्ध देव हुए।

वहां से वे अयोध्यापुरी में नाभिराजा के व मरुदेवी माता के पुत्र रूप में जन्मे, वही बाद में भगवान ऋषभदेव कहलाये। भगवानका जन्म होते ही इन्द्रों ने अयोध्या आकर के बड़ा उत्सव किया।

जिस वक्त भगवान का जन्म हुआ उस वक्त इस भरत क्षेत्र में तीसरा काल था, लोगों को सब चीजें कल्पवृक्ष से मिल जाती थीं, परन्तु बाद में जब तीसरा काल पूरा हुआ और कल्पवृक्ष नष्ट होने लगे, तब भगवान ने अनाज वगैरह के द्वारा जीवननिर्वाह की रीत लोगों को सिखाई। और भी अनेक विद्याएं सिखाई एवं भरत क्षेत्र में राजव्यवस्था चलायी। भगवान का जीवन बहुत पवित्र था। हिंसा झूठ या चोरी ऐसा कोई पाप उनके जीवन में नहीं था। उन्हें आत्मा का ज्ञान था।

भगवान ऋषभदेव जब राजा थे तब उनकी दो रानी थी और 101 पुत्र थे, उनमें सबसे बड़े भरतचक्रवर्ती, व सबसे छोटे बाहुबली। और ब्राह्मी व सुन्दरी नामक दो पुत्री थी। ऋषभदेव ने सब पुत्रों को अच्छा धार्मिक ज्ञान दिया, एवं सभी तरह की विद्याएँ पढ़ाई।

इस तरह से बहुत काल बीत चुका, तब एकबार चैत्र वदी नवमी के दिन जब अयोध्या में भगवान का जन्मोत्सव हो रहा था, बड़ा राजदरबार लगा था, अनेक राजा आकर उनका अभिनन्दन करते थे व उत्तम वस्तुएं भेंट करते थे, देव देवियाँ भी आकर भक्ति से नृत्य करते थे। नीलांजना नामकी एक देवी बहुत अच्छा नृत्य कर रही थी, इतने में अचानक नृत्य करते-करते देवी की आयु समाप्त हो गई-उसकी मृत्यु हो गई। देह की ऐसी क्षणभंगुरता देखते ही राजा ऋषभदेव का मन संसार से विरक्त हुआ, और दीक्षा लेकर वे मुनि हो गये। उनकी दीक्षा के समय भी इन्द्र ने बडा उत्सव किया। अभी

तक असंख्य वर्षों से भरत क्षेत्र में कोई मुनि न थे, भगवान ऋषभदेव ही सबसे पहले मुनि हुए।

मुनि होकर भगवान ने बहुत आत्मध्यान किया, छह मास तक तो वे ध्यान में ही स्थिर खड़े रहे, इसके बाद भी सात मास तक ऋषभ मुनिराज ने उपवास ही किये, क्योंकि मुनि को किस विधि से आहार दिया जाता है यह किसी को मालूम न था। इसप्रकार एक वर्ष से ज्यादा काल भोजन के बिना ही बीत चुका परन्तु भगवान को कोई कष्ट न था, वे तो आत्मध्यान करते थे और आनन्द के अनुभव में मग्न रहते थे। इसी को वर्षीतप कहा जाता है।

अन्त में वैशाख सुदी तीज के दिन ऋषभ मुनिराज हस्तिनापुर पधारे। मुनिराज को देखते ही वहां के राजकुमार श्रेयांस को बड़ा भारी आनन्द हुआ और पूर्वभव का ज्ञान हो गया, उन्हें मालूम हुआ कि इन्हीं भगवान के साथ साठवें भव में मैंने मुनियों को आहारदान दिया था। बस, यह याद आते ही बड़ी भक्ति के साथ उन्होंने मुनिराज को आह्वान किया और मन-वचन-काया की शुद्धिपूर्वक नवधा भक्ति के साथ गन्ने के रस से (इक्षुरस से) भगवान को पारणा कराया। मुनि होने के बाद भगवान ने यह पहली ही बार भोजन लिया, अतः यह देखकर सभी लोग बहुत आनन्दित हुए, देवों ने भी आकाश में बाजे बजाकर बड़ा उत्सव किया। तभी से वह दिन 'अक्षय तीज' पर्व के रूप में आज तक चल रहा है। भगवान तो फिर वन में जाकर अपने आत्मध्यान में लग गये। उन्हें तो बस, आत्मा का ध्यान करना-यही एक काम था, और

कोई काम न था। ध्यान करते करते प्रयाग क्षेत्र में भगवान को केवलज्ञान हुआ, तब वहां बड़ा भारी उत्सव हुआ, अतः वह प्रयाग भी तीर्थ बन गया। केवलज्ञान होने से भगवान ऋषभदेव अरिहन्त हुए-तीर्थंकर हुए। देवों एवं मनुष्यों, पशु एवं पक्षी, सब उनका उपदेश सुनने को धर्मसभा में आये। भगवान ने जैन धर्म का उपदेश दिया, आत्माका स्वरुप समझाया और सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का बोध दिया। यह सुनकर सभी जीवों में अपार

हर्ष हुआ, अनेक जीवों ने आत्मा को समझा, अनेक जीव मुनि हुए, और अनेक जीवों ने मोक्ष प्राप्त किया, भगवान के सभी पुत्र भी मोक्षगामी हुए। इसप्रकार भरत क्षेत्र में भगवान ऋषभदेव ने मोक्ष का दरवाजा खोल दिया, और रत्नत्रयरुप धर्मतीर्थ का प्रवर्तन किया, अतः वे हमारे आदि-तीर्थंकर कहलाये।

बहुत कालतक धर्म का उपदेश देकर भगवान ऋषभदेव कैलाशपर्वत के ऊपर पधारे और वहीं से माघ वदी 14 की सुबह में मोक्ष पधारे, संसार से छूटकर भगवान सिद्ध हुए। आज भी सिद्धलोक में वे पूर्ण आनन्द में विराज रहे हैं, उनको नमस्कार हो !

भगवान ने धर्म का जैसा उपदेश दिया वैसा हमें समझना चाहिए, और भगवान ने जैसी आत्मसाधना की वैसी हमें भी करना चाहिए।

[पाठ ५]

सौ राजकुमारों की कहानी

[जीव और अजीव की समझ]

बच्चो, सौ राजकुमारों की इस छोटी सी कहानी में तुमको जीव और अजीव वस्तु की समझ दी जाती है, तुम इसे समझना, एवं उन राजकुमारों जैसे धर्मात्मा तुम भी बनना।

भगवान ऋषभदेव के जमाने की यह बात है। भगवान ऋषभदेव तीर्थंकर जब अपनी इस भरतभूमि में विचरते थे, उस समय उनके पुत्र भरतचक्रवर्ती इस भरतक्षेत्र पर राज्य करते थे, तब जैन धर्म का बड़ा प्रभाव था। अनेक केवली भगवन्त, मुनिवर व धर्मात्मा इस भूमि पर विचरते थे।

महाराजा भरत के अनेक पुत्र थे। इन्द्र जैसा उनका रूप था, किन्तु वे जानते थे कि यह रूप तो शरीर का है, आत्मा की शोभा इससे नहीं है, आत्मा की शोभा तो धर्म से है। भरत के राजकुमार धर्मी थे, आत्मा को जानते थे और मोक्ष में जानेवाले थे।

एक बार छोटी उम्र के 100 राजपुत्र वन में गेंद खेलने गये। वे खेलने वाले राजकुमार ज्ञानी व वैरागी थे, खेलते हुए भी उन्हें ऐसा विचार आता था कि अरे, मोहरूपी लाठी की मार खा-खाकर गेंद की तरह यह जीव संसार की चारों गति में बहुत घूमा, अब तो आत्मसाधना पूर्ण करके जल्दी इस संसार से छूटेंगे। हमारे ऋषभ-दादा तो केवलज्ञानी-तीर्थंकर हैं, पिताजी भी इसी भव में मोक्ष पाने वाले हैं, और हमें भी इसी भव में मुक्त होकर भगवान बनना है।

देखो तो सही ! छोटे-छोटे बालक खेलते हुए भी कितनी सुन्दर भावना करते हैं ! धन्य है उनको !

खेल पूरा होने के बाद सभी राजकुमार वहीं पर धर्मचर्चा करने लगे। सबसे बड़े कुंवर का नाम रविकीर्तिराज था, और छोटे कुंवर का नाम सूर्यकीर्तिराज था। उसे धर्मचर्चाकी इतनी लगन थी कि पूरे दिन धर्मचर्चा करते हुए भी वह थकता नहीं था। बड़े भाई उससे प्रश्न करते थे और वह उनका उत्तर देता था, अन्य सभी कुमार सुन रहे थे। बहुत आनन्द से चर्चा चल रही थी:-

बड़े कुंवर ने प्रश्न किया:- यह गेंद का खेल खेलने से हमें कितना सुख मिला ?

छोटे कुंवर ने उत्तर दिया:- इसमें से हमको सुख नहीं मिल सकता।

प्रश्न :- खेलने में हमको आनंद तो आया ?

उत्तर :- वह तो रागका आनंद था, आत्मा का सच्चा आनंद वह नहीं था।

प्रश्न :- गेंद में से सुख क्यों नहीं आता?

उत्तर :- क्योंकि उसमें सुख है ही नहीं।

प्रश्न :- उसमें सुख क्यों नहीं ?

उत्तर :- क्योंकि वह अजीव है, अजीव में सुख नहीं होता।

प्रश्न :- तो सुख किसमें है?

उत्तर :- सुख जीव में है?

प्रश्न :- जीव और गेंद में क्या अंतर है?

उत्तर :- जीव में ज्ञान है, गेंद में ज्ञान नहीं है।

प्रश्न :- तो क्या इस जगत में दो तरह की वस्तुएं हैं ?

उत्तर :- हां, एक ज्ञानसहित, दूसरी ज्ञानरहित, ऐसी दो प्रकार की वस्तुएँ हैं।

जिस वस्तु में ज्ञान हो उसे 'जीव' कहते हैं। जिस वस्तु में ज्ञान न हो उसे 'अजीव' कहते हैं।

एक कुंवर कवि था, उसने तुरन्त ही जीव-अजीव का काव्य बनाकर सबको सुनाया:-

जीवन समझना उसको जिसमें होता ज्ञान।
अजीब जानो उसको होय न जिसमें ज्ञान।
जीव अजीव को जान के कर लो आतमज्ञान।
होगी आतमज्ञान से पदवी मोक्ष महान।।

रविकीर्ति :- जीव वस्तु में ज्ञान के सिवा और भी कुछ है?

सर्यकीर्ति :- जी हाँ, जीव में ज्ञान के साथ सुख है, अस्तित्व है, श्रद्धा है, चारित्र हैं, ऐसे तो अपार गुण जीव में हैं।

रविकीर्ति :- यह गेंद तो अजीव वस्तु है, इसमें ज्ञान नहीं है, तो दूसरा कुछ इसमें होगा या नहीं?

सूर्यकीर्ति :- हाँ, इसमें भी इसके गुण होते हैं, क्योंकि-

जीव या अजीव प्रत्येक वस्तु में गुणों का समूह होता है, गुणों के समूह को ही वस्तु कहते हैं।

इस प्रकार जीव-अजीव की चर्चा से सभी राजकुमारों को बहुत खुशी हुई, और इसी का विचार करते हुए वे घरकी ओर चले।

दूसरे दिन क्या हुआ ? उसकी कहानी अगले पाठ में पढ़िये-

कंठस्थ करो-

जीव समझना उसको जिसमें होता ज्ञान।
अजीव जानो उसको होय न जिसमें ज्ञान।
जीव-अजीव को जानके कर लो आतमज्ञान।
होगी आतमज्ञान से पदवी मोक्ष महान।

[पाठ ६]

सौ राजकुमारों की कहानी

(दूसरा भाग)

[चलो दादा के दरबार.... चलो प्रभु के दरबार]

भरत चक्रवर्ती के सौ राजकुमारों की यह कहानी चल रही है। दूसरे दिन जब वे राजकुमार वन में इकट्ठे हुए तब, प्रथम सबने मिलकर प्रार्थना की--

आतमा अनूपम है दीखे राग-द्वेष बिना, देखो भवि जीवो ! तुम आप में निहार के।
कर्म को न अंश कोउ भर्मको न वंश कोउ, जाकी शुद्धताई में न और आप टारके।।
जैसो शिवखेत वसे तैसो ब्रह्म यहां लसे, यहां-वहां फेर नाहीं देखिये विचार के।
जोइ गुण सिद्धमांहि सोइ गुण ब्रह्ममांहि, सिद्ध ब्रह्म फेर नाहीं निश्चे निरधार के।।

प्रार्थना के बाद रविकुमार ने कहाः-बंधुओ ! कल हमने जीव-अजीव की बहुत अच्छी चर्चा की थी, आज भी खेलने के पहले हम धर्मचर्चा ही करेंगे।

सभी ने कहा :- बहुत अच्छा, तत्वचर्चा में जो आनन्द आता है वह खेलने में नहीं आता।

तब रविकुमार ने अनंगराज नामके दूसरे कुमार से कहा :- भैया ! कल जीव-अजीवकी जो चर्चा हुई थी उसका सार तुम सुनाओ।

अनंगराजने खड़े होकर प्रसन्नतासे कहाः सुनिये-

जिसमें गुणोंका समूह हो उसे वस्तु कहते हैं।
वस्तु दो प्रकार की है (1) जीव (2) अजीव।
जीव वस्तु में ज्ञान होता है, अजीव में ज्ञान नहीं होता।
जीव वस्तु में सुख होता है, अजीव में सुख नहीं होता।

अजीव वस्तु को अपनी मानना और जीवको न पहचानना सो अज्ञान है, अज्ञान के कारण, गेंद की तरह जीव संसार में भटकता है। अतः हमें जीव व अजीव की पहचान करना चाहिए, जिससे संसार-भ्रमण का दुःख मिटे व मोक्षसुख मिले।

इसप्रकार धर्मचर्चा पूरी होने के बाद सभी राजकुमार खेलने की तैयारी कर रहे थे, कि इतने में दूर से एक घुड़सवार आता हुआ दिखाई दिया।

पास में आकर उस घुड़सवार ने समाचार दिया कि हस्तिनापुर के राजा जयकुमार ने ऋषभदेव प्रभु के पास दीक्षा ले ली है और वे भगवान के गणधर हुए हैं। पहले वे भरत चक्रवर्ती के सेनापति थे, वैराग्य होने पर अपने मात्र छह साल के कुंवर को राजतिलक करके वे मुनि हो गये। चक्रवर्ती का प्रधानपद छोड़कर अब वे तीर्थंकर भगवान के प्रधान बन गये।

घुड़सवार के मुंह से यह समाचार सुनते ही सब राजकुमारों को आश्चर्य हुआ, और उनके मन में भी संसार से वैराग्य हो गया। 'अहो! उनका जीवन धन्य है !' ऐसा कहकर उनके प्रति नमस्कार किया और वे सब अपने-अपने मन में दीक्षा लेने का विचार करने लगे, दीक्षा के लिये वे सब भगवान ऋषभदेव के समवसशण की ओर जाने लगे। चलते चलते वे गा रहे थे कि-

चलो प्रभु के दरबार......चलो दादा के दरबार.....
प्रभुकी वाणी सुनेंगे.....मुनिदशा हम धारेंगे.....
रत्नत्रयको पावेंगे.....केवलज्ञान प्रगटायेंगे.....
संसार से हम छूटेंगे.....सिद्ध स्वयं बन जायेंगे.....
चलो दादा के दरबार.....चलो प्रभु के दरबार.....

- इस प्रकार गीत गाते सभी राजकुमार दीक्षा लेने के लिये ऋषभ दादा के दरबार में पहुंचे, भगवान को नमस्कार किया, जयकुमार-मुनिराज को भी नमस्कार किया, और दीक्षा लेकर वे सब मुनि हुए। सौ राजकुमारों की दीक्षा का प्रसंग ऐसा अद्‌भुत है कि जिसे सुनकर हमें भी वैराग्य-भावनाएं जागतीं हैं। दीक्षा के बाद छोटे-छोटे वे सब मुनि आत्मध्यान में मग्न हुए। कितने ही काल तक आत्मध्यान करते हुए उन्होंने केवलज्ञान प्रगट किया, और वे सब मुक्त हुए, भगवान हुए।

बन्धुओ, जीव और अजीव की सच्ची पहचानपूर्वक उत्तम चारित्र का यह फल है, अतः तुम भी जीव-अजीव वस्तु को अच्छी तरह समझना और उन वैरागी राजकुमारों जैसा अपना जीवन बनाना।

[पाठ ७]

जिनवर-दर्शन

[जिनकुमार व राजकुमार की कहानी]

जिनकुमार व राजकुमार दो मित्र थे।

एक दिन सुबह जिनकुमार जिन मंदिर की ओर अरिहन्त देव के दर्शन करने के लिये जा रहा था, कि सामने से राजकुमार मिल गया, वह बड़े हर्ष से कहीं जा रहा था।

जिनकुमार ने उससे पूछा :- भैया, इतने हर्ष भरे कहां जा रहे हो ?

राजकुमार ने कहा :- अरे, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि अपनी नगरी के राजा पधारे हैं!

मैं राजा से मिलने जा रहा हूं।

जिनकुमार ने कहा :- अच्छा भैया; परन्तु तुम जिन भगवान के दर्शन कर आये?

राजकुमार :- नहीं भाई ! आज तो मुझे भगवान के दर्शन करने का समय ही नहीं मिलेगा।

जिनकुमार :- बड़े दुःख की बात है कि तुम भगवान के दर्शन भी नहीं करते!

राजकुमार :- परन्तु आज तो राजा से मिलना है, फिर ऐसा मौका कब मिलेगा ?

जिनकुमार :- देखो भाई ! क्या तुम नहीं जानते हो कि अपने भगवान तो राजाओं के भी राजा हैं, भरतचक्रवर्ती जैसे महाराजा भी जिनेश्वर भगवान के चरणों में अपना मस्तक झुकाते थे। तो फिर तुम राजा को देखने के बहाने ऐसे वीतराग भगवान को भूल रहे हो-यह कैसी बात है?

राजकुमार :- तो मुझे क्या करना चाहिए?

जिनकुमार :- किसी भी परिस्थिति में भगवान दर्शन नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि हम जिनवर की सन्तान हैं। हमें प्रतिदिन देवदर्शन, गुरुसेवा व शास्त्रस्वाध्याय करना चाहिये।

राजकुमार :- आपकी बात सच्ची है, मुझे सच्चा मार्ग दिखाने के लिये मैं आपका आभार मानता हूं, और अभी आपके साथ ही मंदिर जी में चलता हूं।

जिनकुमार :- बहुत अच्छा, चलिये।

दोनों मित्र मन्दिरजी पहुँचे। मन्दिर में आकर भगवान का दर्शन करते ही दोनों को बहुत आनंद हुआ। बड़ी भक्ति के साथ वन्दन करके नमस्कारमंत्र बोले, अपने सिर पर गंधोदक लगाया एवं तिलक भी लगाया।

राजकुमार :- मित्र, चलो हम भगवान की कोई स्तुति बोलें।

जिनकुमार :- हाँ देखो, समन्तभद्रस्वामी ने अर्हन्त भगवान की अच्छी स्तुति की है, उसमें कहा है कि-

हे देव। आप मोक्षमार्ग के नेता हो,
आप कर्मरूपी पहाड़ के भेत्ता हो,
आप सभी तत्वों के ज्ञाता हो,
अतः आप जैसे गुणों की प्राप्ति के लिये
मैं आपको वन्दन करता हूं।

राजकुमार :- वाह, बहुत अच्छी स्तुति है! भगवान को वन्दन करते हुए स्वयं भी भगवान होने की भावना भायी है। यह स्तुति मैं कंठस्थ करना चाहता हूं।

जिनकुमार :- हाँ, जरूर करना चाहिये, सुनो इसका मूल श्लोक यह है-

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये।।

राजकुमार :- अच्छा! सुनो, अब मैं इसका हिन्दी बोलता हूं-

प्रभो, मोक्षमार्ग के नायक हो, तुम कर्मगिरि के भेदक हो,
अखिल विश्व के ज्ञायक हो जिन ! हमसे वन्दनलायक हो।
आप जैसे हैं गुण मेरे में, मैं भी उनको चाहत हूं,
निजगुण-प्राप्ति-हेतु जिनवर मैं वन्दन तुमको करता हूं।।

दोनों मित्रों ने बड़ी विनय के साथ और भी अनेक स्तुति की। बाद में हाथ में चावल-बदाम आदि अर्घ लेकर प्रभुका पूजन किया-

जल परम उज्वल गंध अक्षत् पुष्प चरुं दीपक धरुं।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनम के पातक हरुं।
इह भांति अर्घ चढाय नित भवि करत शिवपंक्ति मचूं।
अरहन्त श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं।।
वसुविधि अर्घ संयोजके अति उत्साह मन कीन,
जासों पूजूं परमपद देव शास्त्र-गुरु तीन।

[ॐ ह्रीं भगवान श्री....जिनेन्द्रदेव-गुरु-शास्त्र पूजनार्थे अर्घ
निर्वपामीति...स्वाहा.....]

इस प्रकार पूजन करने के बाद प्रभुजी-सन्मुख शांति से बैठकर थोड़ी देर तक दोनों ने जिन गुणों का चिन्तन किया और हमारा आत्मा भी जिनेन्द्र भगवान जैसा ही है-ऐसा विचार किया। फिर भगवान को नमस्कार करके घर की ओर चले।

रास्ते में राजकुमार ने जिनकुमार से कहा-भाई जी ! आज आपके साथ में भगवान का दर्शन-पूजन करने से मुझे इतना हर्ष हुआ कि, अब से मैं प्रतिदिन प्रभुका दर्शन करने के लिये जरूर आऊंगा।

घर जाने के बाद दोनों मित्र राजा के पास पहुंचे। देरी हो जाने से राजा ने उनसे पूछा-भैया, देरी क्यों हुई ?

राजकुमार ने विनय के साथ कहा :- महाराज, क्षमा कीजिये, हम तो भगवान जिनेन्द्रदेव के दर्शन करने को गये थे, वहां मेरे इस मित्र के साथ भगवान का दर्शन-पूजन करने से मुझे बहुत आनन्द आया। इसी कारण आपके पास आने में देरी हुई।

राजा ने खुश होकर कहा - बच्चो, तुमने बहुत उत्तम काम किया, अरिहन्त भगवान ही विश्व के सच्चे देव हैं, राजाओं के भी वे राजा हैं। चक्रवर्ती जैसे बड़े-बड़े राजा भी प्रभु के चरणों की पूजा करते हैं। अतः सबसे पहले हमें उन्हीं का दर्शन करना चाहिये। तुम्हारे कार्य से प्रसन्न होकर मैं तुम दोनों को यह सुवर्णहार भेंट देता हूं।

जिनकुमार :- महाराज, आपकी बड़ीं कृपा है। परन्तु हमारी ऐसी भावना है कि, यह सुवर्णहार हमको देने के बदले में इसका सुवर्णकलश बनवा कर आप जिन मंदिर के ऊपर चढ़ावें, - इससे हमें विशेष खुशी होगी।

राजा ने यह बात स्वीकार की, और कहा कि बच्चो, जिस राज्य में तुम्हारे जैसे धर्म प्रेमी बालक बसते हैं वह राज्य धन्य है ! कल जब तुम लोग जिन मंदिर जाओगे तब मैं भी तुम्हारे साथ ही चलूँगा और मन्दिर पर सुवर्णकलष चढ़ाऊंगा।

दोनों मित्र बड़े खुश हुए, और अपने अन्य साधर्मियों से भी यह बात की,

यह सुनकर आनंदित होकर सभी ने भगवान के जयनाद से गगन को गुँजा दिया-

बोलिये जिनेन्द्र भगवान की जय ...... !

भगवान के दर्शन करते समय बोलने की स्तुति-

तुभ्यं नमः त्रिभुवनार्तिहराय नाथ तीर्थंकरो जगत में जयवंत होवें।
तुभ्यं नमः क्षितितलामल भूषणाय कारनाद जिनका जयवंत होवें।
तुभ्यं नमः त्रिजगतः परमेश्वराय जिनके समोसरण भी जयवंत होवें।
तुभ्यं नमः जिन ! भवोदधिशोषणाय सद्धर्मतीर्थ जगमें जयवंत होवें।

अर्हन्तो भगवंत इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः
श्री सिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वनतु वो मंगलं.

[पाठ ८]

जैनों का जीवन कैसा हो ?

(सदाचार से सुशोभित जीवन)

हमारे गांव में पाठशाला चलती है। हमारे गुरुजी हमको धर्म की अच्छी अच्छी बातें सिखाते हैं। एकबार महावीर जयन्ती के दिन गुरुजी ने नीचे लिखी शिक्षायें दी, जिन्हें सुनकर सबको खुशी हुई:-

बच्चो, हमें अपना जीवन बहुत ऊंचा बनाना चाहिए,
क्योंकि हम जैन हैं, हमारा धर्म बहुत महान है।

हमारे भगवान ने धर्म का बहुत ऊंचा उपदेश दिया है, और आत्मा की पहचान कराई है। हमें आत्मा की पहचान करनी चाहिए। आत्मा की पहचान करने से हमारा जीवन महान बनेगा।

* हमें सभी जीवों के साथ प्रेम से रहना चाहिए, खास करके अपने साधर्मी भाई-बहनों के प्रति बहुत वात्सल्य-प्रेम रखना चाहिए, उन्हें किसी प्रकार का दु:ख हो तो वह दूर करके उनका धार्मिक उत्साह बढ़ाना चाहिए, और उन्हें हर प्रकार की सुविधा देनी चाहिए।
* किसी भी जीव की निंदा या उन्हें कष्ट देने का भाव नहीं करना चाहिए।
* असत्य-झूठ बोलना वह भी पाप है-जो कि हमारे जीवन को मलिन

करता है, अतः असत्यसे भी दूर रहना चाहिए।

* इसी प्रकार चोरी, दुराचार एवं तीव्र ममता, इन सभी पापों से भी दूर रहना चाहिये, क्योंकि पाप करने से जीव बहुत दुःखी होता है।
* जिसमें मांस हो, जिसमें अण्डा हो, जिसमें शराब हो, जिसमें मधु हो और जिसमें कोई जीव जन्तु हो, ऐसी वस्तु को खाना भी नहीं चाहिए, छूना भी नहीं चाहिए, और उसके खाने वाले का संग भी नहीं करना चाहिए। कभी जुआ खेलना नहीं चाहिए।
* अच्छे-अच्छे मित्रों का संग करना चाहिए, और प्रतिदिन उनके साथ धर्म चर्चा करना चाहिए तथा उनको साथ में लेकर जिनेन्द्र भगवान का दर्शन पूजन करना चाहिए, कभी तीर्थयात्रा भी करना चाहिए। जब अपने मित्रों से मिलो तब हाथ जोड़ के 'जयजिनेन्द्र' कहना चाहिए, और बड़ों से नमस्ते करना चाहिए।

भरत चक्रवर्ती के छोटे-छोटे लड़के सब ऐसा जीवन जीते थे। वे धर्म का अभ्यास करते थे, कोई भी अभक्ष चीज खाते नहीं थे। वे रात को कभी नहीं खाते थे, और बिना छना जल कभी नहीं पीते थे। वे देह से भिन्न आत्मा को पहचानते थे। बंधुओ ! हमें भी उनके जैसा बनना है, अतः हम भी ऐसा करेंगे। ऐसा करने से अपना जीवन ऊंचा बनेगा। और ऊंचा जीवन वही सुखी जीवन है।

अच्छा जीवन बनाने के लिये तुम्हें यह छोटी सी दस पंक्तियां सुनाता हूं जो तुम्हें बहुत पसंद आयेंगी, तुम इन्हें याद रख लेना-

[सब एक साथ बोलो]

(1) मैं जैन धरम का बच्चा हूँ।
(2) मैं अहिंसक जीवन जीता हूँ।
(3) मैं दुःख न किसी को देता हूँ।
(4) मैं अभक्ष कभी नहीं खाता हूं।

(5) मैं मन्दिर प्रतिदिन जाता हूँ।
(6) मैं प्रभुका दर्शन करता हूँ।
(7) मैं साधर्मी से प्रेम करूं।
(8) मैं धर्म का अभ्यास करूं।
(9) मैं आतम-साधक वीर बनूं।
(10) महावीर प्रभु-सा सिद्ध बनूं।

हमारे बालविभाग के हजारों सदस्य
निम्न चार बातों का पालन करते हैं।

* हर रोज भगवान के दर्शन करते हैं।
* तत्वज्ञान का अभ्यास करते हैं।
* रात्रि को खाते नहीं।
* सिनेमा देखते नहीं।

[पाठ ६]

चारगति व मोक्ष
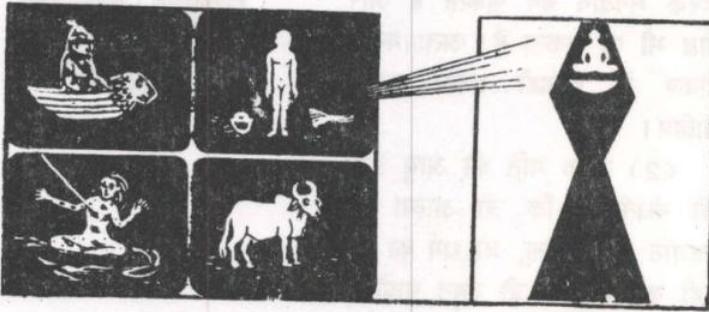
इस जगत में अनंत-अनंत जीव हैं। प्रत्येक जीव ज्ञानस्वरूप हैं।
कोई संसारी है, कोई मुक्त है।

जो जीव सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र पूर्ण करके, व अष्ट कर्मोंको नष्ट करके सिद्ध हुए उन्हें मुक्त कहते हैं, उन्हें शरीर भी नहीं होता वे सदा मोक्ष गति में रहते हैं एवं परम सुखी हैं। वे फिर कभी संसार में अवतार धारण नहीं करते।

जो जीव मुक्त नहीं हुए हैं वे संसार की चारगति में रहते हैं-कोई मनुष्यगति में रहते हैं, कोई नरकगति में, कोई देवगति में, एवं अनन्त जीव तिर्यंचगति में रहते हैं। इस प्रकार संसारी जीव चारों गति में पुनःपुनः जन्म-मरण करते रहते हैं। उस जन्म मरण का मुख्य कारण मिथ्यात्व है,

इसलिये उसे महापाप जानकर छोड़ना चाहिए।

संसार में भटकता हुआ जीव नरक गति में हो आया और स्वर्ग में भी हो आया है, तिर्यंच भी हुआ है और मनुष्य भी हुआ है, परन्तु आत्मा का मोक्षपद उसने कभी प्राप्त नहीं किया, इसलिये इस मनुष्यभव में मोक्ष का उपाय करना चाहिये।

(1) चारों गतियों में मनुष्य गति को सबसे ऊंची इसलिये मानी गई है कि इसमें जीव अपने सभी गुण प्रगट करके भगवान बन सकता है और मोक्ष भी पा सकता है। अतः मनुष्य होकर के हमेंयही प्रयत्न करना चाहिए।
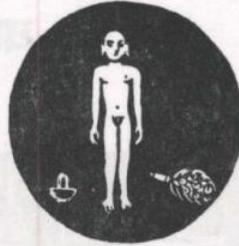
(2) नरक गति की आयु उसी को बंधती है कि जो आत्मा की पहचान नहीं करता, जो धर्म का प्रेम नहीं करता और जो बहुत पापों में अपना जीवन गंवाता है। ऐसा जीव नरक में जा करके वहां बहुत दुःख पाता है। वहां उसके शरीर को बहुत बार काटते हैं, जलाते हैं। उसे न कभी खाने को अन्न मिलता, न कभी पीने को पानी। नरक में बहुत दुख है, अतः बच्चो ! पाप कभी नहीं करना चाहिए। यदि नरक में भी कोई जीव आत्मविचार करके सम्यग्दर्शन प्रगट करे तो उसे वहाँ भी आत्म शांति मिल सकती है।

(3) तीसरी देवगति है। पुण्य करने वाला जीव देव होकर स्वर्ग में जाता है। स्वर्ग में सुख है-ऐसा कहा जाता है, परन्तु बंधुओ ! एक बात ध्यान में रखना कि, यदि आत्मज्ञान नहीं है तो स्वर्ग में भी सच्चा सुख नहीं मिल सकता। स्वर्ग में भी वही जीव सुखी है जिसने आत्माको पहचाना है। आत्मज्ञान के बिना तो स्वर्ग का देव भी दुःखी है। स्वर्ग के द्वारा मोक्ष में नहीं जाया जा सकता, किन्तु मनुष्य होकर सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र के द्वारा ही हम मोक्ष में जा सकते हैं।

(4) तिर्यंचगति में अनन्त जीव हैं, किन्तु उनमें से बहुभाग तो ऐसे हैं कि जिनको कुछ विचार शक्ति ही नहीं। एकेन्द्रियवाले, दोइन्द्रिय वाले, तीनइन्द्रियवाले, चार इन्द्रिय वाले और मनरहित पांच इन्द्रियवाले-उन असंज्ञी जीवों को तो इतना कम ज्ञान है कि वे विचार ही नहीं कर सकते। विचार करने वाले (संज्ञी) पंचेन्द्रिय जीव बहुत थोड़े हैं। इस तिर्यंचगति में भी बहुत दुःख है। कीड़ा - कुत्ता - चूहा - बैल - घोड़ा - मैंढक - बन्दर - हिरन - मछली आदि तिर्यंचों को जो दुःख होता है वह तो हम देखते ही हैं। बहुत मायाचारी-छलकपट करने से या अतीव लोभ करने से तिर्यंच गति

में जाना पड़ता है। अतः लोभ व मायाचार नहीं करना चाहिए। तिर्यंच में भी कोई जीव धर्मोपदेश पाकर आत्मज्ञान कर लेते हैं तो उन्हें भी आत्मा का थोड़ा सा सुख मिल जाता है, और कुछ ही भवों में वे संसार से छूटकर मोक्ष पाते हैं। महावीर प्रभु का जीव भी जब तिर्यंच गति में (सिंह) था तब उसने आत्मज्ञान पाया था और बाद में वह भगवान हुआ।

(5) संसार की चारों गतियों से भिन्न प्रकार की ऐसी पंचम गति वह मोक्ष गति है। मोक्ष प्राप्त करने वाला जीव सदाकाल अपने शुद्धस्वरूप में रहता है और शाश्वत सुखी जीवन जीता है।

हमें चारों गतियों के दुःख से छूटना हो और मोक्ष सुख को पाना हो तो आत्मज्ञान करना चाहिए। आत्मज्ञान के बिना जीव चार गति में रुलता है। आत्मज्ञान करने से जरूर मोक्ष मिलता है।

[पाठ १०]

मोक्ष का मार्ग

[आगे प्रगट होने वाली पहली पुस्तक के एक पाठ की रूपरेखा]

एक बार एक मुमुक्षु जीव को विचार आया कि, अरे इस संसार में अनादि से मैं दुःखी हूं। इस दुःख को मिटाकर आत्मा का हित व सुख मुझे प्राप्त करना है। वह हित किस प्रकार से हो ?

ऐसा विचार करके वह जीव की ओर चला, वन में अनेक मुनिवर आत्मा के ध्यान में विराजमान थे, वे अंत्यत शांत थे। अहा! उनकी शांत मुद्रा मोक्ष का मार्ग ही दिखला रही थी।

उनकी वन्दना करके मुमुक्षु जीव ने विनय के साथ पूछा-प्रभो- आत्मा के हित का उपाय क्या है? मोक्ष का मार्ग क्या है।

आचार्य महाराज ने कृपापूर्वक कहा : हे भव्य !

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः ।

[सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र मोक्षमार्ग है।]

मुनिराज के श्रीमुख से ऐसा मोक्षमार्ग सुनकर वह मुमुक्षु अतीव प्रसन्न हुआ और भक्ति के साथ उस सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की आराधना करने के लिये उद्यमी हुआ।

बंधुओ ! हमें भी उस मुमुक्षु की तरह मोक्षमार्ग को पहचानना चाहिए, और उसकी आराधना करनी चाहिए। वह सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के तीन पाठ जैन बालपोथी में तुमने पढ़े होंगे। उसकी विशेष समझ अब आगे की किताब में दी जायेगी।

[पाठ ११]

मेरा जैन धर्म

(जैन बालकों का कूच-गीत)

धर्म मेरा धर्म मेरा धर्म मेरा रे,
प्यारा प्यारा लागे जैन धर्म मेरा रे।
ऋषभ हुए वीर हुए धर्म मेरा रे,
बलवान बाहुबली सेवे धर्म मेरा रे।

भरत हुए राम हुए धर्म मेरा रे,
कुन्दकुन्द जैसे सन्त हुए धर्म मेरा रे।
चंदना सीता अंजना हुई धर्म मेरा रे,
ब्राह्मी राजुल मात शोभावे धर्म मेरा रे।
सिंह सेवे वाघ सेवे धर्म मेरा रे,
हाथी वानर सर्प सेवे धर्म मेरा रे।

आतमा का ज्ञान देता धर्म मेरा रे,
रत्नत्रय का दान देता धर्म मेरा रे।
सम्यक्त्व जिसका मूल है वह धर्म मेरा रे,
सुख देता मोक्ष देता धर्म मेरा रे।
धर्म मेरा धर्म मेरा धर्म मेरा रे,
प्यारा प्यारा लागे जैन धर्म मेरा रे।

[पाठ १२]

महावीर प्रभु की हम सन्तान ....
हैं तैयार ..... हैं तैयार

(जैन बालकों का कूच-गीत)

महावीर प्रभु की हम सन्तान ..... हैं तैयार हैं तैयार।
जिनशासन की सेवा करने.... हैं तैयार हैं तैयार।
सिद्ध पद का स्वराज लेने..... हैं तैयार हैं तैयार।
अरिहन्त प्रभु की सेवा करने..... हैं तैयार हैं तैयार।
ज्ञानी गुरु की सेवा करने..... हैं तैयार हैं तैयार।
तीर्थधाम की यात्रा करने...... हैं तैयार हैं तैयार।
जिन सिद्धान्त का पठन करने..... हैं तैयार हैं तैयार।
जिनशासन को जीवन देने..... हैं तैयार हैं तैयार।
सम्यग्दर्शन प्राप्त करने..... हैं तैयार हैं तैयार।
आत्मज्ञान की ज्योत जगाने..... हैं तैयार हैं तैयार।
साधुदशा का सेवन करने..... हैं तैयार हैं तैयार।

मोहशत्रु को जीत लेने को..... हैं तैयार हैं तैयार।
वीतरागी निर्मोही होने..... हैं तैयार हैं तैयार।
आत्मध्यान की धूम मचाने..... हैं तैयार हैं तैयार।
ज्ञायक का पुरुषार्थ करने...... हैं तैयार हैं तैयार।
वीरमारग में दौड़ लगाने..... हैं तैयार हैं तैयार।
मोक्ष-दरवाजा खोलने को...... हैं तैयार हैं तैयार।
संसार-सागर पार उतरने..... हैं तैयार हैं तैयार।
सिद्ध प्रभु के साथ रहने को...... हैं तैयार हैं तैयार।

[हम सब वीर प्रभु की सन्तान हैं, वीर प्रभु की सन्तान कैसे-कैसे उत्तम कार्य करने के लिये तैयार होती हैं-यह इस कूच-गीत में दिखाया गया है, प्रत्येक बालकों को उत्साहित करने वाला यह कूच-गीत सभी को पसन्द आयेगा। प्रभात फेरी और रथयात्रा जैसे प्रसंग पर यह गीत गाया जाता है।]

जैन बालपोथी दूसरा भाग
(परीक्षा के 101 प्रश्न)

इस पुस्तक में से 101 प्रश्न यहां दिये जाते हैं - इनका उत्तर विद्यार्थी से लेना, यदि उसको उत्तर न आये तो पुस्तक में से देखकर भी वह उत्तर दें ऐसी पद्धति रखना। तदुपरांत बालकों को एक दूसरे के साथ भी यह प्रश्नोत्तर कराना। प्रश्नोत्तर के द्वारा बालकों को अभ्यास करने का उत्साह मिलेगा और उनकी समझ पक्की होगी। प्रत्येक पाठ में से आठ-दस प्रश्न लिये गये हैं।

1. जैन बालपोथी का पहला भाग तुमने पढ़ा है ?
2. तुम कौन हो ?
3. तुम्हारे देव कौन हैं ?
4. अरिहन्त देव कैसे हैं ?
5. वे हमको क्या दिखाते हैं ?
6. मुक्तिमार्ग कैसा है ?
7. तुम किसके समान हो ?
8. अरिहंत बनने के लिए किसको जानना चाहिए ?
9. पंचपरमेष्ठी के वंदन की कविता बोलो।
10. पंचपरमेष्ठी कौन हैं ?
11. तुम्हें क्या होना अच्छा लगता है ?
12. राजा होना अच्छा कि भगवान होना अच्छा ?
13. पंचपरमेष्ठी किससे होते हैं ?
14. पंचपरमेष्ठी किसका उपदेश देते हैं ?
15. अपने को सबसे प्रिय कौन है ?
16. शुद्ध नमस्कार-मंत्र बोलो।
17. तुम सबेरे और शाम को कौनसी स्तुति करते हो ?
18. एक माता के तीन पुत्र, उनके नाम क्या हैं ?
19. चार मंगल हैं वे कौन ?
20. लोक में उत्तम चार वस्तु कौनसी हैं?
21. जीव को शरण रूप कौन हैं ?
22. जीव क्या करे, तो मंगल होता है ?
23. चत्तारि मंगलं का पाठ बोलो।
24. तीर्थंकर किसको कहते हैं ?
25. भरत चक्रवर्ती किसके पुत्र थे ?
26. ऋषभदेव तीर्थंकर कहां जन्में ?
27. अयोध्या अपना तीर्थ है, वह किसलिए?
28. राजगृही में विपुलाचल पर धर्म का उपदेश किसने दिया ?

29. तीर्थंकर भगवान ने कौन सा मार्ग दिखाया ?
30. मोक्ष का मार्ग क्या है ?
31. जैनधर्म क्या है ?
32. राग को जैन धर्म कहते हैं या वीतराग भाव को ?
33. चौबीस तीर्थंकर के नाम बोलो।
34. चौबीस भगवान की मूर्ति कहां है ?
35. ऋषभदेव, अभिनंदन, शांतिनाथ, तथा पार्श्वनाथ प्रभु के चिन्ह बताओ।
36. चंद्र, कल्पवृक्ष, गेंडा और सिंह के चिन्ह से कौन से भगवान पहिचानने में आते हैं?
37. अपने तीर्थंकरों का जीवन कैसा होता है ?
38. ऊंचा जीवन कैसा होता है ?
39. तुमने किसी तीर्थंकर का जीवन चरित्र पढ़ा है ?
40. आत्मा किस लक्षण से जाना जाता है?
41. तीर्थंकर भगवान के द्वारा बताया हुआ धर्म आज भी अपने को कौन समझाते हैं ?
42. चौबीस तीर्थंकर किस देश में जन्में ?
43. ऋषभदेव के आत्मा ने सम्यक्त्व कब प्राप्त किया ?
44. ऋषभदेव के जीव ने पिछले आठवें भव में मुनि को आहारदान दिया था, उसे देख कर चार तिर्यंच खुशी हुए, वे कौन ?
45. ऋषभदेव को वैराग्य कब हुआ?
46. उन्हें केवलज्ञान कब प्राप्त हुआ ?
47. वर्षीतप किसे कहते हैं ? वह किसने किया?
48. वर्षीतप का पारना किसने कराया ?
49. भरतक्षेत्र में मोक्ष का दरवाजा किसने खोला ?
50. ऋषभदेव कहां से मोक्ष गए ?
51. भरत चक्रवर्ती के 100 राजकुमार गेंद खेलते-खेलते क्या विचार कर रहे थे ?
52. गेंद खेलने में जो मजा आता है यह सच्चा सुख है? कि राग है ?
53. जड़ में सुख होता है ?
54. सुख किसमें होता है ?
55. जगत में दो प्रकार की वस्तु है, वह कौनसी ?
56. जीव किसको कहते हैं ?
57. अजीव किसको कहते हैं ?
58. क्या अजीव वस्तु में भी गुण होते हैं ?
59. वस्तु किसे कहते हैं ?
60. सौ राजकुमारों को घुडसवार ने क्या समाचार दिए ?
61. ऋषभदेव भगवान की कोई प्रार्थना बोला।
62. जीव संसार में क्यों भटकता है ?
63. जीव-अजीव की पहिचान से क्या होता है ?
64. घुड़सवार के पास से जयकुमार की दीक्षा के समाचार सुनकर

राजकुमारों ने क्या किया ?

65. ऋषभदेव के दरबार में जाते समय राज कुमार क्या गाते थे ?
66. जिनकुमार और राजकुमार की कथा से तुमको कौनसी शिक्षा मिली ?
67. चक्रवर्ती राजा से भी बड़े कौन हैं ?
68. भगवान की पूजा का पद बोलो।
69. भगवान की कोई स्तुति बोलो।
70. अर्घ में कौनसी आठ वस्तुएं होती हैं?
71. गंधोदक किसे कहते हैं ?
72. मोक्षमार्गस्य नेतारं यह स्तुति बोलो।
73. यह स्तुति किसने बनायी ?
74. मोक्षमार्ग का नेता कौन है ?
75. हम भगवान को वंदन किसलिये करते हैं ?
76. राजा के पास जाने में राजकुमार को देरी क्यों हुई ?
77. क्या राजाने उनको कुछ सजा की ?
78. राजा ने कुमारों को क्या इनाम दिया ?
79. कुमारों ने उस इनाम का क्या किया?
80. तुम्हारे गांव में राजा और भगवान आयें, तो तुम पहले किसके पास जाओगे ?
81. साधर्मी के प्रति अपने को क्या करना चाहिए ?
82. कैसे कार्यों से दूर रहना चाहिए ?
83. हम जिनवर की संतान हैं-इसकी दस लाइन बोलो।
84. चार गति कौन सी है ?
85. चार गति के सिवाय पांचमी गति कौनसी ?
86. कौनसी गति में से मोक्ष पा सकते हैं ?
87. चार गति में मनुष्य गति उत्तम क्यों है ?
88. मनुष्य होकर क्या करने से मोक्ष होता है ?
89. मोक्षसुख पाने के लिये क्या करना ?
90. अपने जैन धर्म में कौन से महापुरूष हुए ?
91. जैनधर्म क्या देता है ?
92 धर्म का मूल क्या है ?
93. तुम्हारा प्यारा धर्म कौनसा है ?
94. जैनधर्म के गीत की चार पंक्ति बोलो।
95. मुमुक्षु जीव को किसकी भावना हुई ?
96. मुमुक्षु ने वन में जाकर मोक्ष का मार्ग किनसे पूछा ?
97. मुनिराज ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया ?
98. हम किसकी संतान हैं ?
99. वीर प्रभु की संतान कैसे उत्तम कार्यों को करने के लिए तैयार है ? उसकी दो लाइन बोलो ?
100. जैन धर्म की प्रभावना करने के लिये क्या करेंगे ?
101. जैन धर्म की यह बालपोथी तुम्हें कैसी अच्छी लगी ?

-: इतना करना :-

बालको । सवेरे जल्दी उठना।
उठकर आत्मा का विचार करना।
प्रभुका स्मरण करना और नमस्कार-मंत्र बोलना।
फिर स्वच्छ वस्त्र पहिनकर जिनमन्दिर जाना।
जिनमन्दिर जाकर भगवान के दर्शन करना।
इसके बाद शास्त्रजी को वंदन करना,
और उनका पठन करना।
फिर गुरूजी के दर्शन करना, उनका उपदेश सुनना,
और सुनकर विचार करना।
हर रोज इतना करना।
ऐसा करने से तुम्हारा आत्मा पवित्र होगा।

संकल्प -

'भगवान बनेंगे'

सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे।
सप्त भयों से नहीं डरेंगे।।

सप्त तत्व का ज्ञान करेंगे।
जीवन-अजीव पहिचान करेंगे।।

स्व-पर भेदविज्ञान करेंगे।
निजानन्द का पान करेंगे।।

पंच प्रभु का ध्यान धरेंगे।
गुरुजन का सम्मान करेंगे।।

जिनवाणी का श्रवण करेंगे।
पठन करेंगे, मनन करेंगे।।

रात्रि भोजन नहीं करेंगे।
बिना छना जल काम न लेंगे।।

निज स्वभाव को प्राप्त करेंगे।
मोह भाव का नाश करेंगे।

रागद्वेष का त्याग करेंगे।
और अधिक क्या ? बोलो बालक !

भक्त नहीं, भगवान बनेंगे।।